दैनिक भास्कर

Date: 10-11-26

पर्यावरण के प्रश्न पर ग्लोबल साउथ की आवाज बने हैं हम

संपादकीय

31वीं सीओपी तुर्किये में सोमवार से शुरू हुई। पहली बार अमेरिका की औपचारिक अनुपस्थिति में दुनिया के तमाम राष्ट्राध्यक्ष और मंत्री 11-12 नवम्बर को पर्यावरण संकट पर चर्चा करेंगे। ट्रम्प के पेरिस एग्रीमेंट से बाहर होने की घोषणा के बाद मुख्य चुनौती है कि ग्रीनहाउस दुष्प्रभाव से लड़ने के लिए धन कहां से मिलेगा। जाहिर है कि ग्लोबल साउथ का प्रतिनिधित्व भारत करेगा और उसकी मांग होगी कि समृद्ध पश्चिमी यूरोप अब यह जिम्मेदारी ले। साथ ही ऊर्जा की सस्ती तकनीकी भी विकासशील देशों को बगैर डब्ल्यूटीओ शर्तों के मुफ्त ट्रांसफर करे। भारत ने सौर एवं पवन ऊर्जा उत्पादन क्षमता 164 गीगावॉट करके जबरदस्त छलांग लगाई है, लेकिन स्टोरेज तकनीकी के अभाव में 17-18% ऊर्जा ही उपयोग में आ पाती है। भारत जैसे देश अपने पर्याप्त कोयले का भंडार पूरी तरह से छोड़कर गैर- जीवाश्म स्वच्छ ऊर्जा पर नहीं जा सकते, क्योंकि ऐसे परिवर्तन की भारी लागत कोई भी विकासशील देश स्वयं वहन नहीं कर सकता। सीओपी में भारत और जर्मनी के पास जिम्मेदारी होगी कि वे 2035 तक स्वच्छ ऊर्जा को ओर बढ़ने के लिए आम सहमति बनाएं, ताकि तापमान वृद्धि 15 डिग्री तक कम की जा सके। फ्रांस व फिलिपींस की कोशिश होगी कि समृद्ध देश वर्तमान वित्तीय मदद के वादों पर अमल करने में सहमति बनाएं। ऑस्ट्रेलिया अंतिम मसौदा तैयार करेगा।

Date: 10-11-26

अपने अतीत की विरासत को सहेजने का जिम्मा भी हमारा है

सैयद अता हसनैन, (बिहार के राज्यपाल और कश्मीर कोर के पूर्व कमांडर)

दीदारगंज की प्रसिद्ध यक्षी प्रतिमा 1917 में गंगा नदी के किनारे मिली थी। आज पटना स्थित बिहार संग्रहालय आने वाले दर्शक पॉलिश्ड बलुआ पत्थर से बनी उस प्रतिमा के सामने खड़े होकर उसे गढ़ने वाले मूर्तिकार के कौशल की सराहना कर सकते हैं। लेकिन उसकी खोज से लेकर आज संग्रहालय की जिस दीर्घा में यह मूर्ति

प्रतिष्ठित है, वहां तक का सफर धैर्य और सतत प्रयासों की कहानी कहता है। पीढ़ियों ने मिलकर इसे सहेजने में योगदान दिया है और एक संस्थान ने इसे व्यापक जनसमुदाय के सामने लाना संभव बनाया है।

यात्रा संबंधी प्रकाशन 'वर्थ अ जर्नी' ने दुनिया के 100 सर्वश्रेष्ठ संग्रहालयों की सूची में बिहार संग्रहालय को वैश्विक स्तर पर नौवां और एशिया में पहला स्थान दिया है। इस सूची में बिहार संग्रहालय ने न्यूयॉर्क के मेट्रोपॉलिटन म्यूजियम ऑफ आर्ट और यहां तक की पेरिस के विश्व-विख्यात लूव्र को भी पीछे छोड़ दिया है। यह सम्मान स्वागतयोग्य है। हम बिहार के ही नालंदा, बोधगया, राजगीर, वैशाली और इस भूमि का इतिहास बयान करने वाले ऐसे ही अनेक अन्य स्थलों पर आने वाले लोगों के अनुभव को भी उतनी ही संवेदनशीलता और सावधानी से संवार सकते हैं।

बिहार सरकार इस संग्रहालय की परिकल्पना करने, इसके लिए धन उपलब्ध कराने और इसे निरंतर संचालित रखने का श्रेय पाने की हकदार है। तत्कालीन मुख्यमंत्री नीतीश कुमार की दूरदृष्टि ने बिहार के ऐतिहासिक महत्व के शिल्पों-वस्तुओं को उनकी महत्ता के अनुरूप एक उपयुक्त आश्रय प्रदान किया। संग्रहालय के महानिदेशक रहे अंजनी कुमार सिंह के नेतृत्व को भी रेखांकित किया जाना चाहिए।

1917 में स्थापित पटना संग्रहालय ने इस उपलब्धि की नींव तैयार करने में एक बड़ी भूमिका निभाई थी। अपनी नई सुविधाओं और दीर्घाओं के साथ आज भी वह अपने आप में एक प्रतिष्ठित संस्थान है। ये दोनों संग्रहालय आगंतुकों को बिहार के इतिहास को जानने-समझने के अलग-अलग अवसर देते हैं। ये मिलकर पटना को एक ऐसा शहर बनाते हैं, जहां से बिहार के इतिहास की यात्रा शुरू की जा सकती है।

बिहार संग्रहालय की वास्तुकला भी उसके आकर्षण का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है। जापान की माकी एंड एसोसिएट्स और मुंबई की ओपोलिस ने यहां दीर्घाओं और खुले प्रांगणों की ऐसी शृंखला तैयार की है, जहां आगंतुक अपनी गति से संग्रहालय को देख-समझ सकते हैं। भीतर मौर्य, गुप्त और पाल राजवंशों के साथ बौद्ध और जैन परंपराओं से भी रूबरू होने का अवसर मिलता है। क्षेत्रीय और समकालीन कला तथा प्रवासी बिहारियों को समर्पित एक दीर्घा यह दिखाती है कि बिहार की सांस्कृतिक जीवनधारा किस तरह निरंतर विकसित होती रही है। बाल दीर्घा में बच्चे स्वयं गतिविधियों में हिस्सा लेकर सीख सकते हैं। यदि कोई बच्चा संग्रहालय से लौटते समय वहां देखी चीजों के बारे में सवाल पूछता है, तो समझिए कि इस यात्रा से उसने कुछ हासिल किया है।

बिहार के राज्यपाल का पदभार संभालने के बाद से ही मैं अकसर इस बात का उल्लेख करता रहा हूं कि बिहार के पास भारत और दुनिया के साथ साझा करने के लिए बहुत कुछ है। यह संग्रहालय दिखाता है कि इस विरासत को प्रस्तुत करने का तरीका भी कितना मायने रखता है। नालंदा के खंडहरों के बीच घूमते हुए किसी आगंतुक को इस बात का अहसास होना चाहिए कि कभी यहां विद्वान किस तरह अध्ययन, शास्त्रार्थ और विचारों का आदान-प्रदान किया करते थे। बोधगया में आगंतुकों के लिए उपलब्ध सुविधाओं का ध्यान रखते हुए इस स्थान की धार्मिक गरिमा और विशिष्टता का सम्मान किया जाना चाहिए। राजगीर और वैशाली का भी अपना अलग इतिहास

है, जिसे आगंतुकों के लिए सहज और बोधगम्य तरीके से प्रस्तुत किया जाना चाहिए। बिहार संग्रहालय इस दिशा में किए जाने वाले प्रयासों के लिए एक मानक प्रस्तुत करता है। किसी स्थल के बारे में प्रभावी ढंग से दी गई जानकारी लोगों को वहां अधिक समय बिताने के लिए प्रेरित करती है। संरक्षण का काम सुनिश्चित करता है कि वह स्थल आने वाली पीढ़ियों के लिए भी उपलब्ध रहे। किसी स्कूल के साथ बिहार से आने वाले बच्चों का अनुभव भी उतना ही समृद्ध होना चाहिए, जितना दुनिया के किसी दूसरे हिस्से से आए आगंतुक का।

हमारे प्राचीन शिक्षा-केंद्र और आध्यात्मिक चिंतन की परंपराएं कभी पूरे एशिया से लोगों को आकर्षित करती थीं। विद्वानों के आदान-प्रदान, संयुक्त प्रदर्शनियों और शैक्षणिक यात्राओं के माध्यम से हम उन संबंधों को फिर से जीवंत कर सकते हैं। इसी को मैंने 'नालंदा एप्रोच' कहा है।

Date: 10-11-26

केंद्र और राज्यों के बीच अच्छा तालमेल देश के लिए जरूरी है

डॉ. अरुणा शर्मा, (प्रैक्टिशनर डेवलपमेंट इकोनॉमिस्ट और इस्पात मंत्रालय की पूर्व सचिव)

देश की 65% आबादी युवा है, बेरोजगारी दर करीब 8% है, लेकिन सरकारों का ध्यान गवर्नेंस के बजाय चुनावी रणनीतियों पर अधिक है। यह स्थिति चिंता का विषय है। वोटर लिस्टों को अपडेट करने के प्रयासों को इस आधार पर चुनौती दी गई है कि इससे नागरिकों का अपनी पसंद के प्रतिनिधियों को चुनने के अधिकार प्रभावित हो सकता है। यह नतीजतन इस पर भी असर डालता है कि किस पार्टी की सरकार बनेगी। जल्दबाजी में की गई ऐसी किसी भी प्रक्रिया की गंभीर पड़ताल जरूरी है, जिससे मौलिक लोकतांत्रिक अधिकारों के छिनने का खतरा पैदा होता हो।

दूसरी चिंता यह है कि जनप्रतिनिधियों से अपेक्षा की जाती है कि वे उन वादों और राजनीतिक नजरिए के प्रति जवाबदेह बने रहें, जिनके आधार पर उन्होंने वोट मांगे थे। लेकिन व्यक्तिगत या सामूहिक रूप से बार-बार दल-बदल होने से 52वें संविधान संशोधन अधिनियम के जरिए बनाए गए दल-बदल विरोधी फ्रैमवर्क की भावना कमजोर होती है। सुशासन के नजरिए से अब इसकी समीक्षा करने की जरूरत है। यदि कोई निर्वाचित प्रतिनिधि अपनी उस राजनीतिक संबद्धता या पार्टी से अलग होता है, जिसके आधार पर उसने जनादेश हासिल किया था, तो उसके लिए दुबारा जनसमर्थन पाने की अनिवार्यता करने का प्रावधान जवाबदेही की भावना को मजबूत कर सकता है।

1.4 अरब की आबादी और 32.8 लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल वाले भारत के लिए मजबूत संघीय शासन-व्यवस्था जरूरी है। संघवाद सुशासित राज्यों को विकास के विविध सूचकांकों पर बेहतर प्रदर्शन करने के साथ समावेशी

विकास, टिकाऊ रोजगार, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, अच्छी स्वास्थ्य-सेवाओं और अधिक जवाबदेह सार्वजनिक संस्थाओं की ओर बढ़ने का अवसर देता है। कुछ राज्यों ने अपनी पुरानी 'बीमारू' राज्य की छवि से बाहर निकलने का प्रयास किया है, जबकि कुछ आज भी विकास संबंधी चुनौतियों से जूझ रहे हैं। ऐसे में शासन की गुणवत्ता और निरंतरता जरूरी है।

हाल के वर्षों में ऐसी चिंताएं सामने आई हैं कि संघीय-व्यवस्था धीरे-धीरे कमजोर हुई है। 73वें और 74वें संविधान-संशोधनों ने स्थानीय स्वशासन को मजबूत किया था। वहीं लगातार बने वित्त आयोगों ने राज्यों और स्थानीय निकायों को अधिक अधिकार हस्तांतरित कराने पर जोर दिया। अनटाइड फंड ने स्थानीय निकायों को स्थानीय प्राथमिकताओं के अनुसार काम करने, बुनियादी ढांचे की कमियों को दूर करने और जरूरी सेवाओं की पहुंच बेहतर बनाने की आजादी दी है। लेकिन 15वें वित्त आयोग ने स्थानीय निकायों के अनुदान का एक हिस्सा खास उद्देश्यों के लिए निर्धारित कर दिया। ऐसे में यह स्थिति भी बन सकती है कि यदि पंचायतों ने घरों तक जलापूर्ति और सुविधाघरों की उपलब्धता जैसे लक्ष्य पहले ही हासिल कर लिए हैं तो यह राशि अनुपयोगी रह जाएगी। केंद्र शासित प्रदेशों में स्थानीय निकायों की कुछ राशि को पंचायतों से जुड़े विभागों को सीधे देने के बजाय गृह मंत्रालय के जरिए भेजे जाने के प्रावधान से भी स्थानीय निकायों की वित्तीय स्वायत्तता को लेकर सवाल उठे हैं। 16वें वित्त आयोग के तहत इसकी भी समीक्षा हो। भले ही राज्यों को केंद्रीय करों में हिस्सेदारी मिलती है, लेकिन केंद्र प्रायोजित योजनाओं में बदलाव राज्यों पर वित्तीय भार बढ़ा सकता है। मनरेगा इसका उदाहरण है।

एक और चिंता उस राजनीतिक विमर्श को लेकर है, जो चुनावी अभियानों के बाद भी बना रहता है। चुनाव के दौरान राजनीतिक प्रतिस्पर्धा स्वाभाविक है, लेकिन जनादेश मिलने के बाद प्राथमिक जिम्मेदारी सुशासन सुनिश्चित करने की होनी चाहिए। संघीय-व्यवस्था में यह स्वाभाविक है कि केंद्र और राज्यों में अलग-अलग दलों की सरकारें हों। पर विपक्ष भी शासन-व्यवस्था का ही हिस्सा है, जो सरकारों की निगरानी करता है, उन्हें संविधान के प्रति जवाबदेह बनाए रखता है।

हमें केंद्र और राज्य में बेहतर तालमेल के जरिए सुशासन पर फोकस करना होगा। ऐसा ढांचा स्थानीय जरूरतों को समझने व उनके अनुरूप कदम उठाने में मददगार है। आगे का रास्ता संघीय-व्यवस्था का सम्मान करने, मानव-विकास के मानकों को बेहतर बनाने और चुनाव के बाद होने वाले दलबदल पर अंकुश लगाने में निहित है।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 10-11-26

किफायती वितरण

संपादकीय



उर्वरक सब्सिडी का बोझ बढ़ने की आशंकाओं के बीच 2026 के खरीफ सीजन के दौरान चुनिंदा सीमावर्ती जिलों में उर्वरकों की बिक्री में दर्ज की गई 37.56 प्रतिशत की गिरावट राहत देने वाली खबर है। यह गिरावट उर्वरक खरीद के लिए डिजिटल सत्यापन व्यवस्था लागू किए जाने के बाद दर्ज की गई है। इस व्यवस्था के अंतर्गत एग्रीस्टैक और अन्य डिजिटल प्लेटफॉर्म के माध्यम से उर्वरक खरीद को किसानों की आईडी, भूमि रिकॉर्ड और फसल की जरूरतों से जोड़ा गया है। सब्सिडी वाले यूरिया का औद्योगिक उपयोग और सीमा पार तस्करी चिंता का विषय रहे हैं। उर्वरकों की बिक्री में आई यह गिरावट सब्सिडी के दुरुपयोग और रिसाव के संभावित पैमाने का नया संकेत देती है। इसकी वजह कीमतों में भारी अंतर है। भारत में किसानों को 45 किलोग्राम यूरिया बैग लगभग 265 रुपये में दिया जाता है जबकि सितंबर में इसकी अनुमानित आयात सहित लागत 1,674 रुपये थी। इसका बड़ा राजकोषीय प्रभाव भी है। वित्त वर्ष 2026-27 का उर्वरक सब्सिडी का बजट आवंटन लगभग 1.71 लाख करोड़ रुपये है। वित्त वर्ष 2025-26 में भी उर्वरक सब्सिडी पर खर्च बढ़कर अनुमानित 2.11 लाख करोड़ रुपये तक पहुंच गया। यह 1.68 लाख करोड़ रुपये के बजट अनुमान से 26 प्रतिशत और 1.86 लाख करोड़ रुपये के संशोधित अनुमान से 13.4 प्रतिशत अधिक है।

केंद्र सरकार की ओर से शुरू किया गया उर्वरक बिक्री ढांचा एक स्वागतयोग्य पहल है। इसके तहत उर्वरक की खरीद पूरी होने से पहले किसान की डिजिटल पहचान और सत्यापित भूमि रिकॉर्ड को फसल की जरूरतों से जोड़ा जाता है। मौजूदा एकीकृत उर्वरक प्रबंधन प्रणाली के साथ मिलकर यह ढांचा असामान्य खरीद पैटर्न की पहचान करने, जिला स्तर पर उर्वरकों की खपत पर निगरानी रखने और सब्सिडी के वितरण को तर्कसंगत बनाने में मदद कर सकता है। पायलट परियोजना में शामिल जिलों में उर्वरकों की बिक्री में गिरावट संकेत देती है कि इस व्यवस्था के संभावित लाभ सीमावर्ती क्षेत्रों तक ही सीमित नहीं हैं। उर्वरकों की बिक्री में आई गिरावट का आकलन करते समय इस वर्ष फसल चक्र में बदलाव और कम बारिश जैसे कारकों को भी ध्यान में रखना होगा। यह भी देखना होगा कि डिजिटल सत्यापन वास्तविक किसानों को सुविधा से वंचित न कर दे। पट्टे पर खेती करने वाले किसान, बटाईदार और ऐसे लोग जो अधूरे या विवादित भूमि रिकॉर्ड वाली जमीन पर खेती कर रहे हैं उनके लिए पात्रता साबित करना मुश्किल हो सकता है। चूंकि जमीन का मालिकाना हक और उस पर खेती करने वाला

व्यक्ति हमेशा एक ही नहीं होते इसलिए उर्वरक की उपलब्धता को भूमि रिकॉर्ड से बहुत अधिक जोड़ने पर व्यवस्था के समावेशी स्वरूप के प्रभावित होने का खतरा है। उद्देश्य यह होना चाहिए कि सब्सिडी का लाभ सही लोगों तक पहुंचे लेकिन इसके लिए किसी आवश्यक कृषि इनपुट की उपलब्धता को भूमि रिकॉर्ड पूरी तरह दुरुस्त होने की शर्त से न बांधा जाए। बुनियादी बात यह है कि बेहतर निगरानी से भारत की उर्वरक नीति के असंतुलन दूर नहीं हो सकते। यूरिया पर भारी सब्सिडी है जबकि फॉस्फेट और पोटाश वाले उर्वरक अपेक्षाकृत महंगे हैं। इससे किसान अन्य आवश्यक पोषक तत्वों की तुलना में नाइट्रोजन का अत्यधिक इस्तेमाल करने के लिए प्रोत्साहित होते हैं। वित्त वर्ष 2024-25 में भारत का नाइट्रोजन:फॉस्फेट:पोटाश उपभोग अनुपात 9.3:3.5:1 रहा, जबकि कृषि विज्ञान के लिहाज से 4:2:1 का अनुपात उपयुक्त माना जाता है। इस असंतुलन का असर मिट्टी की सेहत, पोषक तत्वों के उपयोग की दक्षता और समग्र कृषि उत्पादकता पर पड़ता है।

सरकार को डिजिटल बुनियादी ढांचे का इस्तेमाल केवल उर्वरक लेनदेन पर नजर रखने के लिए ही नहीं बल्कि सब्सिडी को तर्कसंगत बनाने के लिए भी करना चाहिए। कीमतों का चरणबद्ध युक्तिकरण, प्रत्यक्ष लाभ अंतरण की बेहतर व्यवस्था और पोषक तत्वों के संतुलित इस्तेमाल को बढ़ावा देने वाले प्रोत्साहन उर्वरकों की हेराफेरी और उनके अत्यधिक उपभोग, दोनों को कम कर सकते हैं। मृदा स्वास्थ्य कार्ड और फसल-विशिष्ट उर्वरक सिफारिशें इन बदलावों को दिशा देने में मददगार हो सकती हैं। उर्वरक सब्सिडी पर होने वाली संभावित बचत से सरकार को विकास को गति देने वाली परिसंपत्तियों के निर्माण पर अधिक खर्च करने का अवसर मिलेगा।

Live हिन्दुस्तान .com

Date: 10-11-26

इजरायल में नई सरकार का इंतजार

अनिल त्रिगुणायत, (पूर्व राजनयिक)



इजरायल में नई सरकार बनने का रास्ता करीब-करीब साफ हो गया है। चुनाव परिणाम बेशक त्रिशंकु 'नेसेट' (इजरायली संसद) की मुनादी कर रहे थे, लेकिन अरब समर्थित पार्टियों, खासतौर से मंसूर अब्बास के नेतृत्व वाली 'राअम' ने विपक्षी गठबंधन को समर्थन देने का एलान कर दिया है, जबकि 'ज्वॉइंट लिस्ट-गठबंधन बेंजामिन नेतन्याहू की पुनर्वापसी का पक्षधर नहीं है।

संभवत: इन्हीं संभावनाओं को देखते हुए राष्ट्रपति आइजैक हर्जोग ने विपक्षी खेमे के मुखिया गादी आइजनकोट को सरकार बनाने का न्यौता दिया है। 120 सदस्यीय नेसेट में उनके गठबंधन को 48 सीटें मिली हैं, जबकि नेतन्याहू की दक्षिणपंथी लिकुड पार्टी व उनके अति-दक्षिणपंथी और कट्टर यहूदी सहयोगियों ने 53 सीटों पर कब्जा किया है। इस तरह, अरब पार्टियों के साथ से यशार पार्टी व उनके अन्य सहयोगी दल सरकार बनाने में सफल साबित होते दिख रहे हैं।

फिलहाल, आइजनकोट के पास 28 दिनों का वक्त है, जो विशेष परिस्थितियों में 14 दिनों के लिए बढ़ाया भी जा सकता है। हालांकि, उनके सामने दिक्कत यह है कि अरब पार्टियों और यहूदी राष्ट्रवादी दलों के बीच फलस्तीन, गाजा युद्ध और इजरायल की राष्ट्रीय पहचान जैसे मुद्दों पर वैचारिक मतभेद रहे हैं। इसलिए कोई भी यहूदी दल अरब पार्टियों को सरकार में शामिल करने को लेकर सहज नहीं रहा है।

आइजनकोट ने भी इसीलिए तमाम पार्टियों के सामने चार मुख्य सिद्धांत रखे हैं, जिनको स्वीकार करने के बाद ही उनको नई सरकार में शामिल किया जा सकता है। ये चार सिद्धांत हैं- इजरायल को एक यहूदी व लोकतांत्रिक देश मानना; 1948 के स्वतंत्र घोषणा-पत्र के बुनियादी मूल्यों पर सहमति; सैन्य व राष्ट्रीय सेवाओं में हर नागरिकों को योगदान देने की अनिवार्यता और हमास को आतंकी गिरोह मानना। अरब समर्थित पार्टियों का कहना है कि आइजनकोट का साथ देने को तैयार हैं, लेकिन इस तरह के सिद्धांतों के वे पक्षधर नहीं।

आइजनकोट के सामने तीन विकल्प हैं- नेतन्याहू के साथ सत्ता साझा करना; अरब नेतृत्व वाली पार्टियों से समर्थन लेने के लिए अपने सिद्धांतों से समझौता करना (हालांकि उनके गठबंधन के दल इसके खिलाफ हैं); या फिर अति-रूढ़िवादी पार्टियों का साथ मांगना, जो अपने समुदाय के लोगों के लिए अनिवार्य सैन्य सेवा में छूट की मांग करती हैं। गौरतलब है, शास व यूनाइटेड तोराह जुडाइज्म (यूटीजे) जैसी चरम-रूढ़िवादी पार्टियों ने 13 सीटें जीती हैं, जिनके समर्थन से आइजनकोट को संसद में बहुमत के लिए जरूरी 61 सीटें हासिल हो जाएंगी। यूटीजे ने नेतन्याहू को समर्थन न देने की घोषणा कर भी दी है।

चूंकि इजरायल की सियासत इस तरह की है कि वहां गठबंधन की सरकारें ही बनती रही हैं और सरकारों का गिरना व चुनाव आमतौर पर सामान्य माना जाता है, इसलिए संभावना यही है कि आइजनकोट को वैचारिक रूप से विरोधी पार्टियों का साथ मिल जाएगा और वह सरकार बनाने में सफल हो जाएंगे। हां, यह सरकार कितने दिन चलेगी, इसके बारे में साफ-साफ बता पाना फिलहाल मुश्किल है, पर चूंकि नेतन्याहू को हटाना तमाम दलों की प्राथमिकता में है, इसलिए नई सरकार के कार्यकाल पूरा करने की संभावना ही अधिक है।

सवाल यह है कि इन सबसे बदलेगा क्या? आइजनकोट की गिनती इजरायल के उन नेताओं में होती है, जो नेतन्याहू की नीतियों की खुली मुखालफत करते रहे हैं। ऐसे में, गाजा में मार-काट कम हो सकती है। अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप ने गाजा शांति बोर्ड की स्थापना की भी है, जो युद्धविराम, विसैन्यीकरण, पुनर्निर्माण और

वहां की अंतरिम शासन की निगरानी के लिए बनाया गया है। इसी तरह, वेस्ट बैंक की हिंसा कम हो सकती है। सीरिया में भी बम-बंदूकों की गरजन थमते हम देख सकते हैं।

हां, लेबनान में इजरायल शायद ही पीछे हटेगा, क्योंकि यहां इजरायली सेना बड़े पैमाने पर सड़कों और सैन्य चौकियों का एक गलियारा तैयार कर रही है। चूंकि यह इजरायली सुरक्षा से जुड़ा मसला है, इसलिए आइजनकोट इस मामले में पूर्ववर्ती सरकार की नीतियों पर ही आगे बढ़ेंगे। रही बात ईरान की, तो इसका भविष्य राष्ट्रपति ट्रंप के रुख से तय होगा। अच्छी बात है, शांति-स्थापना के लिए तेहरान व वाशिंगटन में बातचीत चल रही है। अगर यह वार्ता सफल होती है, तो आइजनकोट सरकार उस पर अपनी सहमति ही दिखाएगी।

भारत की बात करें, तो बतौर नेतन्याहू ने करीब दो दशक इजरायली सत्ता-सदन में बिताए हैं, इसलिए नई दिल्ली के साथ उनका स्वाभाविक ही अच्छा संबंध रहा है। वास्तव में, अमेरिका और भारत ही दो ऐसे प्रमुख देश हैं, जिनके साथ इजरायल की 'स्ट्रैटेजिक पार्टनरशिप' है। हमारे साथ रक्षा, खुफिया सहयोग, कृषि, तकनीक, साइबर सुरक्षा, अंतरिक्ष जैसे क्षेत्रों में गहरा सहयोग है, तो अमेरिका के साथ उसके सैन्य तकनीक व सामरिक स्तर पर घनिष्ठ संबंध हैं। नेतन्याहू ने तो एक वक्त यह भी कहा था कि अगर भारत को सुरक्षा परिषद में वीटो का अधिकार मिल जाए, तो उनको अमेरिका की जरूरत नहीं रहेगी! हालांकि, वाशिंगटन के बिना तेल अवीव का गुजारा मुश्किल है। नेतन्याहू के खिलाफ जनभावना बढ़ने की एक वजह यह है कि अमेरिका ने इजरायल को सालाना चार अरब डॉलर की सैन्य मदद को बंद करने की घोषणा की है।

फिर भी, इजरायल की सत्ता पर बेंजामिन हों या आइजनकोट या फिर अन्य कोई नेता, वह भारत को नजरंदाज नहीं कर सकते। दुनिया के सबसे बड़े लोकतांत्रिक देश के साथ उनके रिश्ते पूर्ववत चलते रहेंगे। इसलिए इजरायल की नई सरकार भी सुरक्षा, कृषि, तकनीक हस्तांतरण, खुफिया सहयोग जैसे मुद्दों पर समान रूप से आगे बढ़ती रहेगी। द्विपक्षीय रिश्तों में किस तरह का कोई बदलाव नहीं आएगा।

हां, युद्धों के रुकने से इस क्षेत्र में शांति व स्थिरता आती है, तो भारत को जरूर फायदा होगा। इससे ऊर्जा, खाद्यान्न और खाद आदि की निर्बाध आपूर्ति सुनिश्चित हो सकेगी, जिससे अर्थव्यवस्था को लाभ मिलेगा। यही नहीं, संघर्षरत क्षेत्रों में लगभग एक करोड़ से अधिक प्रवासी भारतीय रहते हैं। युद्धों के रुकने से उनके जीवन में भी स्थिरता आएगी। इजरायल चूंकि कृषि व नवाचार के क्षेत्र में काफी तरक्की कर चुका है, इसलिए भारत भी नई सरकार के साथ संबंध बनाकर ही चलना पसंद करेगा। कुल मिलाकर, इजरायल-भारत के रिश्ते में गरमाहट ही आएगी।